International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 26-05-2025, Accepted: 25-06-2025, Published: 11-07-2025
Volume 11, Issue 3, 2025, Page No. 9-10

राहुल सांकृत्यायन के यात्रा साहित्य में प्रतिबिम्बित सांस्कृतिक परिस्थिति

डॉ. लिट्टी योहन्नान
असिस्टेंट प्रोफेसर, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, मार थोमा कॉलेज, तिरुवल्ला, केरल, भारत

सारांश
हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार महा पंडित स्व राहुल सांकृत्यायन। उनका असली नाम केदारनाथ पांडेय था। राहुल जी के जीवन का मूलमंत्र ही घुमक्कडी यानी गतिशीलता रही है। राहुल जी का समग्र जीवन ही रचना धार्मिता की यात्रा थे। उनके यात्रा साहित्य ने हमें उस देश की सांस्कृतिक परिस्थितियों का बोध भी होता है। जिसका संक्षिप्त विवरण मैंने अपने आलेख में किया है।

मूल शब्दः यात्रा सांस्कृतिक विश्वसंस्कृति, यायावर

'यात्रा' शब्द का सामान्य अर्थ है किसी भी उद्देश्य से एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाना ; अर्थात् स्थान परिवर्तन को ही यात्रा कहलाता है। विभिन्न शब्दकोशों में भिन्न – भिन्न अर्थों में इस शब्द का प्रयोग किया गया है। 'बृहत् हिन्दी शब्द कोश' में इसका अर्थ है – "जाने की क्रिया, तीर्थ यात्रा, यात्रिकों का समूह, मेला; काल – यापन, यान, प्रस्थान, चढाई, युद्ध – यात्रा, उपाय – व्यवहार, जीवन निर्वाह, उत्सव, नृत्य – गान – युक्त रास लीला के ढंग का बंगला में प्रचलित एक अभिनय।"[1] बंगला में 'यात्रा' शब्द प्रचलित है। डॉ. सुरेन्द्र माथुर ने 'यात्रा' शब्द की लौकिक पारलौकिक व्याख्याएँ प्रस्तुत करते हुए लिखा है – यात्रा का जीवन से अविच्छिन्न सम्बन्ध है। जीवनगत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह सदैव से बड़े पर्वत, घनघोर जंगल और जलते हुए रेगिस्थानों की यात्रा करता आया है। मनुष्य की बढ़ती आवश्यकता के अनुसार उसकी यायावारी वृत्ति भी बढ़ने लगी।

यात्रा वृत्तान्त साहित्यिक यात्री के यात्रानुभवों की संनेदनात्मक एवं कलात्मक प्रस्तुति है, जिसमें विश्वसंस्कृति की समग्रता, मानव–जीवन की संपूर्णता एवं प्राकृतिक जीवन की विराटता है। नवीन स्थानों को देखने और अपने सामाजिक संपर्कों को विकसित करने की प्रकृति मनुष्य में निहित है। यात्रा साहित्य का मूल स्त्रोत यद्धपि वैदिक तथा संस्कृत ग्रन्थ में है फिर भी हिन्दी में यह 19 वी शताब्दी की ही देन है। हरदेवीजी, श्री भगवानदास वर्मा, श्रीधर पाठक जैसे लेखकों ने प्रारम्भिक यात्रा वृत्तान्तों की रचना की है तो महापण्डित राहुल सां कृत्यायन, सत्यदेव परिव्राजक जैसे साहित्यकारों ने इसे एक नवीन दिशा प्रदान की है।

विश्व के महान यायावर राहुल सांकृत्यायन का स्थान हिन्दी यात्रा साहित्य के इतिहास में सर्वापरि है। उन्होंने हिन्दी यात्रा साहित्य को एक नवीन दिशा प्रदान कर परवर्ती यात्रा ग्रन्थकारों का मार्ग प्रशस्त किया है। श्री देवीचरण रस्तोगी ने राहुलजी के सम्बन्ध में लिखा है – "यात्रा वर्णन लिखनेवाले साहित्यकारों में राहुलजी का नाम सबसे आगे आता है। देश – विदेश के अनुभवों का जब ये वर्णन करते हैं, तो उनकी शैली और अधिक रसात्मक हो जाती है। वास्तव में इस रसात्मकता का आधार इनका अनुभव रहता है।"[3] वस्तुतः देश–विदेश के भ्रमण द्वारा मिली हुई अनुभव सम्पपत्ति ही राहुलजी को एक श्रेष्ठ यात्रा साहित्यकार का स्थान देने में सहायक रही।

राहुलजी का व्यक्तित्व बहु आयामी तथा वैविध्यपूर्ण था। अपने जीवन में अनेक कष्ट झेले राहुल के जीवन में सर्वत्र यात्रा ही यात्रा है, कहीं यात्रान्त नहीं। राहुलजी के यात्रा दृ साहित्य या यात्रा – संस्मरण को महज 'ट्रावलाग लिटरेचर' में निबद्ध नहीं किया जा सकता। राहुल जी जो भी लिखते है, कथात्मक या अकथात्मक गद्य सर्वत्र यात्रा का मोटिफ (प्रयोजन – प्रसंग) ही उपस्थिति रहा है। "यह महज ऐतिहासिक स्थलों का स्थल बयान नहीं है। इसके साथ राहुलजी की आत्मरजनी रफति जुड़ी हुई है। राहुलजी की यायावरीयता केवल साधारण प्रवास – पर्यटन या ट्रीप – ट्रावल तक सीमित नहीं। भारतीय जीवन दर्शन एवं संस्कृ ति से राहुल जी ने विश्व को न केवल अवगत कराया, बल्कि ज्ञान के सागर को भारत भी वे लाए।"[4] किन्तु इन यात्राओं का ध्येय शुष्क ज्ञानोपासना नहीं है। सन 1926 ई से लेकर सन् 1958 ई. तक के 32 वर्षों में उन्होंने देश– विदेश की विभिन्न यात्राएँ की और बीस यात्रा कृतियों का सृजन भी किया।

राहलु सांकृत्यायन के यात्रा साहित्य में लेखक के व्यक्तित्व की अपेक्षा यात्रा–प्रदेश का व्यक्तित्व प्रमुख होता है। वास्तव में यह यात्रा साहित्य की यथार्थता की कसौटी है। अर्थात् उनके यात्रा विवरणों में यात्रा के रोचक दृश्यों के साथ उन प्रदेशों की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक स्थितियों का विस्तृत परिचय मिलता है। इन परिस्थितियों के अंकन में कही भी अतिशयोक्ति नहीं, वरन् सर्वत्र यथार्थ है।

राहुल सांकृत्यायन का यात्रा साहित्य सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारतीय सांस्कृति के साथ विदेशी संस्कृति को भी अपनी यात्रा परक रचना में स्थान दिया है। यात्रा साहित्य और संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सांस्कृति में समाज, कला, धर्म, इतिहास आदि समाविष्ट किए हैं तो यात्रा साहित्य इन सभी की कलात्मक अभिव्यक्ति है। राहुलजी जहाँ भी जाते हैं उनका संपर्क उन प्रदेशों के समाज, व्यक्तितों एवं उनकी स्थिति, रीति–रिवाज, खान–पान, वेश–भूषा आदि से रहता है। उन्होंने सांस्कृति के इन समस्त स्वरूपों एवं मार्मिक घटनाओं को अपनी कृतियों में अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है।

'किन्नर देश में', 'गढवाल', 'कुमाऊँ', 'जौनसार' देहराद्न, दोर्जेलिड् परिचय एवं 'हिमाचल', राहुलजी की हिमालय यात्राओं से सम्बन्धित रचनाओं है। इन रचनाओं में हिमालय की सांस्कृ तिक परिस्थिति का उल्लेख हुआ है। हिमालय के विभिन्न प्रान्तों के लोगों की वेशभूषा में भिन्नता है। 'जौनसार देहरादून' में देहरादून जिले के पुरुषों एवं स्त्रियों की पोशाक पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने लिखा है – "जौनसारी पुरुषों की पोशाक पास के टेहरी के इलाकों वाले लोगों जैसी पायजामा और ऊपर अंगरखा अब कोट कमीज भी होती है। स्त्रियाँ अपनी पुरानी पोशाक को अब भी कायम किए हुए है। वह नीचे लहँगा पहनती है, ऊपर किनारा लगे हुए सामने फटा कोट होता है, जो कुछ दृ कुछ 5 वीं 6 वीं सदी के कूचा (चीन मध्य एशिया) की स्त्रियों जैसा होता है। सिर पर वह कमाल बाँधती है। जेवर अधिकतर

चाँदी के होते हैं। नाक में कड़े नथ और नथूने के बिचले छेद में पत्ते वाली बुलाक होती है। नाचने दृ गाने से उन्हें बड़ा प्रेम है।"[5] किन्नर लोगों की आभूषण प्रियता पर भी उन्होंने लिखा है।

पहाडी लोग बड़े उत्सवप्रिय हैं। वहाँ कई प्रकार की मेलायें होती थीं। फसल काटते समय या देवताओं के उत्सव के समय वहाँ के लोग एक जगह जमा होकर मेलायें मनाते थे। ये सभी बातें वहाँ की सांस्कृति परिस्थिति की ओर इशारा करती हैं। मेले का वर्णन इस प्रकार किया गया है दृ "देवता की पालकी ऐसी होती है, जिसके ऊपर जेवरों और कीमती कपडों से सजा हुआ देवता का चेहरा या चेहरे रखे रहते हैं। पालकी के बीच से दो लंबे – लंबे भूर्जपत्र या किसी और दुरख्त के लचकदार लंब डंडे लगे रहते हैं, जिसे आदमी अपने दोनों कंधों पर रखकर उठाते है। पालकी इधर या उधर लटककर देवता के अभिप्राय को प्रकट करती है। यात्रा के लिए निकलते समय आगे दृ आगे बहुत से लोग नंगी तलवार या दूसरी चीजे लेकर चलते हैं, साथ में बाजा बजता रहता है। कभी – कभी कई – कई देवता एक जगह जमा होकर उत्सव मनाते हैं। नर – नारी अच्छे – अच्छे कपडे पहन फूलों से सज – धजकर वहाँ पहुँचते हैं। मिठाइयों और दूसरी चीजों की दूकानें जाती हैं। देवताओं के यह मेले दो या तीन दिन तक चलते हैं। देवता भी नाचती है, और बाजे पर स्त्री–पुरुष भी नाचते अपनी भाषा में मधुर गीत गाते हैं।"[6] कोठी का मेला शिमला जिले का सबसे बड़ा मेला है, जो मई के मध्य में होता है। सायर, पडरू, खराई, चेरेवाल आदि शिमला जिले के अन्य महत्वपूर्ण मेलायें हैं। हिमालय के लोगों की खान दृ पान और रहन दृ सहन में काफी विभिन्नताएँ हैं।

इरान नामक कृति में वहाँ के शहरों के वर्णन के साथ, इरानी भोजन, नाटकों का खेल आदि की भी विस्तृत जानकारी मिलती है। ईरानी शहरों का वर्णन इस प्रकार किया गया है – "इरानी शहरों की सडकें खूब साफ और चौडी है, और वे इतनी सीधी निकाली गई हैं कि मालूम होता है पहले से नक्शा तैयार करके शहर को बसाया गया है। सचमुच इरानी सडकों का मुकाबला हिन्दुस्तान में सिर्फ नई दिल्ली की सड़कों ही कर सकती हैं और जब हमें मालूम होता है कि यह सब काम दस वर्ष के छोटे समय में किया गया है तो आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता है।"[7] यहाँ राहुलजी ने दस वर्ष के समय में इरानी सभ्यता पर हुई नयी मोड पर प्रकाश डाला है। इरानी सभ्यता की एक और विशिष्टता यह है कि वहाँ एक शहर से दूसरे शहर जाते समय स्वदेशी हो या विदेशी हो सबको जवाज (आज्ञापत्र, शहदारी) की आवश्यकता है। इरानी भोजन के बारे में भी उन्होंने लिखा है – "भोजन में पतली चपातियां, चावल बिना मसाले दुम्बे का गोश्त था। एक तश्तरी में हरा दौना या पुदीना जैसा पत्ता और कुछ टुकडे प्याज के भी थे।"[8] राहुलजी के द्वारा देखे गये इरानी नाटकों का भी विस्तृत वर्णन इस कृति

में है। इस प्रकार इरान नामक कृति वहाँ की सांस्कृतिक परिस्थिति को उजागर करने में सक्षम है।

जापान में जापानियों पर पाश्चात्य के प्रभाव के बारे में उल्लेख है। वहाँ की अधिकतर लड़कियाँ शिक्षित और कामकाजी है। इन लड़कियों की पोशक अगंरेजी ढंग की हैं। वहाँ के नृत्य कला में पाश्चात्य ढंग बहुत है। इन नृत्यों में केवल इतना फर्क है कि बौद्ध धार्मिक मुद्राओं को जोड़कर बौद्ध नृत्य का नाम दे रखा है। नृत्य के वेश भी अधिकतर अंग्रेजी ढंग के हैं। कहीं – कहीं जापानी वेश देखने को मिलता है। सोवियत मध्य एशिया में राहुलजी ने सोवियत क्रान्ति के बाद की सांस्कृतिक परिस्थिति का उल्लेख किया है। पहले स्त्रियाँ स्वतन्त्र नहीं थी। लेकिन क्रान्ति के बाद स्त्रियाँ कारखानों में काम करती थीं। उसी प्रकार वहाँ की कला में भी बहुत फर्क आया। सोवियत के पुराने कलाकारों ने कला का प्रयोग आभूषणों एवं रत्नों पर किया था। लेकिन बाद में आकर पत्थरों पर भी खोदा है। राहुलजी के शब्दों में – "किर्गिजों के बनाये कालीनों और गलीचों में उन्होंने प्राचीन काल से आज तक की किर्गीज़ जीवन गाथा पढ़ी है। इनमें शिकार के भी दृश्य हैं, भोज और देशान्तर – गमन के दृश्य है, और कितनी ही कहानियाँ भी अंकित है।"[9] यहाँ राहुलजी ने किर्गीस्तान के कला का विवरण दिया है, जो कहाँ की संस्कृति का द्योतक है।

तिब्बत यात्रा से सम्बन्धित पुस्तकों में तिब्बत की सांस्कृतिक परिस्थिति का उल्लेख हुआ है। यहाँ के लोगों की वेष – भूषा, रीति – रीवाज, त्योहार आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। तिब्बत में शत – प्रतिशत लोग मांसाहारी है। इस सम्बन्ध में उन्होंने यात्रा के पन्ने में विस्तार से बताया है। वहाँ मांस उतना सुलभ तो नहीं है फिर भी बड़े – बड़े घरों में सूखा मांस हमेशा तैयार था। सूखे मांस के दो एक टुकडे एक ऊँचे पाँव की तस्तरी पर रखकर नमक और चाकू के साथ मेहमान को खाने के लिए रख दिया जाता है। यह कहाँ के लोगों के लिए सबसे प्रिय भोजन है। भोजन में विचित्रता देखने के साथ तिब्बती लोगों के त्योहारों में भी विशिष्टिता है। वहाँ का सबसे बड़ा उत्सव है नलवर्षोत्सव जो 30 जून को मनाया जाता था। इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है – "30 जून को यहाँ पर भी अब तिब्बती नव वर्ष मनाया जा रहा था। लहासा में तो नववर्षोत्सव सबसे बड़ा उत्सव है। यहाँ पर भी लोग नये – नये कपडों से सजधर कर ध्वजा – पताका ले घोडों पर चढ़ निकले। स्त्रीगण भी तमाशा देखने गयी थीं। दलबल साहित्य दोनों महलों के स्वामी पूरब के पहाड के पीछे गये, और वहाँ कितनी देर तक घोडे और आदमी चक्कर काटते रहे। लोग शाम को पाँच बजे लौटे।"[10] भारतीय कला एवं कारीगारी के अनुसार ही यहाँ के मठों का निर्माण हुआ था। यह तिब्बती लोगों पर भारतीय संस्कृति के प्रभाव पर प्रकाश डालता है। लद्धाक तथा तिब्बत में पाण्डव विवाह प्रथा प्रचलित थी। अर्थात् सभी भाइयों के लिए पत्नी होना। ये सभी वहाँ की सांस्कृतिक परिस्थिति की ओर इशारा करती है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि राहुल सांकृत्यायन एक सच्चे लेखक, पर्यटक थे। यात्रा में उन्हें आकर्षण था, सर्वत्र सीमाओं को लाँघते हुए वे आगे चलते थे। एक सामान्य पर्यटक से आगे बढ़कर एक विचारक की भाँति इन स्थानों का वर्णन किया है। देश–विदेश के विशद वर्णन के साथ वहाँ के जीवन, रीति – रिवाज़, उत्सवों, त्योहारों का भी सजीव चित्रण मिलता है। वास्तव में इन यात्रा वर्णनों के पीछे एक कलाकार का हृदय और एक विचारक का मस्तिष्क है जो देश – विदेश में बिखरी सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति को उजागर करने में सक्षम है।

संदर्भ सूची

1. कालिकाप्रसाद (सं), राजवल्लभ मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, बृहत् हिन्दी कोश – पृ.119
2. डॉ. सुरेद्र माथुर – यात्रा साहित्य का उद्भव और विकास – पृ.10
3. देवीचरण रस्तोगी – हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक हसिहास – पृ.284
4. राहुल सांकृत्यायन – मेरी जीवनयात्रा, खण्ड 1, 1950, किताब महल – पृ.14
5. राहुल सांकृत्यायन – जौनसार देहरादून – पृ.95
6. राहुल सांकृत्यायन – हिमालय भाग दृ 1, पृ. 82
7. राहुल सांकृत्यायन – एशिया के दुर्गम भूखण्डों में, पृ. 134
8. राहुल सांकृत्यायन – एशिया के दुर्गम भूखण्डों, में, पृ.140
9. राहुल सांकृत्यायन – सेवियत मध्य एशिया, पृ. 58
10. राहुल सांकृत्यायन – यात्रा के पत्रे, पृ – 46